नारी के आँसुओं में धर्म है, क्रीड़ा में संस्कृति और हास्य में सुख का राज्य है।
स्वच्छताभरी सादगी उसका सर्वोपरि शृंगार है।

नारी केवल सन्तान सम्पादिका ही नहीं, पालिका तथा संचालिका भी है।
वही संस्कृति की सच्ची संरक्षिका भी है।

व्यक्ति अपने आप में भावनात्मक दृष्टि से अपूर्ण है।
यदि नारी उस भाव को पूर्ण कर देती है तो व्यक्तित्व पूर्ण और सार्थक हो जाता है।

देश की सबसे बड़ी नैतिक शक्ति नारी है।
परिवार में नारी का दायित्व पुरुष से कम नहीं, अधिक ही है।

संतान का निर्माण माँ के हाथों में होता है। एक समझदार और दक्ष स्त्री अपने बच्चों को मनचाही दिशा प्रदान कर सकती है।

नारी का हृदय स्नेह से भरा वह झरना है
जो सृष्टि के आदिकाल से मानवता का सिंचन कर रहा है।

यदि प्रेम के साक्षात् दर्शन करने की अभिलाषा हो तो
माता के वात्सल्य भरे गद्‌गद नेत्रों को देखो।

बिना नारी को शिक्षित और स्वावलम्बी किए
धरा पर स्वर्गीय वातावरण की कल्पना असम्भव है।

आवश्यकता पड़ने पर नारी देश की रक्षा और समाज संचालन के कार्यों के नेतृत्व भी कर सकती है और मानव समाज का गौरव ऊँचा उठा सकती है।

नारी को बनाते समय उसमें उच्चस्तरीय भावना और आदर्शवादिता कूट–कूटकर भरी गयी है। इस तथ्य को भारत के ऋषिपुत्रों ने अवश्य समझा है।

तीनों लोकों में माता के समान कोई गुरु नहीं है।
संसार में आया हर प्राणी माता से अधिक और किसी का ऋणी नहीं है।

हमारा गौरव नारियों के शरीर को सजाने में नहीं
बल्कि उन्हें शक्ति, सरस्वती और साध्वी बनाने में है।

नारी के पास सबसे आदरणीय सम्पत्ति उसका सतीत्व है।
उसके प्रति आसक्ति नहीं, किन्तु उसकी दिव्यता के प्रति सम्मान का भाव रखें।

नारी पुरुष की पूरक सत्ता है। पुरुषों में मात्र दृष्टि होती है जबकि नारी में अन्तर्दृष्टि।
नारी के बिना पुरुष का व्यक्तित्व अपूर्ण है।

नारी का अपमान एक राष्ट्रीय कलंक है।
नारी को अविकसित रखकर कोई भी राष्ट्र उन्नति नहीं कर सकता।

ज्ञान के क्षेत्र में नारी अनादिकाल से नर के समान है।
नर के पास यदि क्षात्र तेज है तो नारी के पास ब्रह्मतेज।

नारी परिवार का हृदय और प्राण है।
परिवार को स्वर्ग बनाने की प्रकृति प्रदत्त क्षमता नारी में है।

एक स्त्री अपने जीवन में जितना त्याग करती है,
पुरुष उतना त्याग सौ जन्मों में भी नहीं कर सकता।

नारी बिना परिवार, हृदय बिना कलेवर जैसा है।
इसलिए परिवार में उसका महत्त्व और स्थान सर्वोपरि होना चाहिए।

न केवल व्यक्ति वरन् समाज और राष्ट्र का समग्र विकास
मातृशक्ति की गरिमा की प्रतिष्ठा द्वारा ही सम्भव है।

नारी अर्थात् सम्वेदना, सौजन्य तथा सौन्दर्य की पुंज।
इन्हीं विशेषताओं से भरापूरा इक्कीसवीं सदी का नारी युग होगा।

नारी जन्मदात्री है। समाज का प्रत्येक भावी सदस्य
उसकी गोद में पलकर संसार में खड़ा होता है।

नारी की अवमानना का अर्थ है अपनी उद्‌गम शक्ति की गरिमा को गिराना।
मातृसत्ता का अपमान भगवान भी नहीं सहते।

यदि हमें प्रतिष्ठा का उच्च सोपान चढ़ना है तो
नारी शक्ति को एक आध्यात्मिक स्वरूप में स्थापित करना ही होगा।

नारी विधेयात्मक शक्ति है। जो कार्य पुरुष ताण्डव द्वारा करता है,
नारी वही कार्य स्नेह, सरलता एवं सौम्यतापूर्वक कर लेती है।

एक आचार्य दस उपाध्याय के समान आदरणीय है; एक पिता सौ आचार्य के समान आदरणीय है;
किन्तु एक माता एक हजार पिता से भी विशेष सम्मान की अधिकारिणी होती है।

समाज की नवरचना का उद्देश्य तब तक पूर्ण नहीं हो सकता जब तक नारी उन्नत और प्रगतिशील नहीं होगी।

नारी का सबसे बड़ा आभूषण 'प्रेम' है। वह उसकी प्राकृतिक शक्ति है,
जिससे वह राक्षस को देवता और मनुष्य को भगवान बना देती है।

नारी जिसे आत्मसमर्पण करती है, उसके दोषों को नीलकंठ की तरह जीवन भर बूंद–बूंद करके पी जाने में सतत प्रयत्नशील रहती है।

नारी की प्रतिष्ठा और गौरव को चिरस्थायी रखने के लिए सभी धर्मगन्थों में स्थान दिया गया है।
मातृदेवो भवः के सम्बोधन से उपनिषद् में माता को अलौकिक सम्मान प्रदान किया गया है।

नारी को अर्द्धाङ्गिनी ही नहीं, सहधर्मिणी भी कहा गया है।
पुरुष का कोई भी धर्मकार्य पत्नी के बिना पूर्ण नहीं होता।

स्त्री का सहकार तथा महत्त्व मानव जीवन की उन्नति और विकास के लिए हमेशा से आवश्यक रहा है, आज भी है और भविष्य में भी रहेगा।

स्त्री कामधेनु है। जब उसे माता स्वरूप में देखा जाता है तो वह मानव समाज को देवत्व प्रदान करती है और अपने आशीर्वाद से सुख समृद्धि के द्वार खोल देती है।

नर–नारी का और नारी–नर का पूरक अंश है। जब यह दोनों अंश अलग–अलग होकर अपनी स्वतन्त्र सत्ता स्थापित करने की भूल करते हैं, तभी समाज में विकृतियाँ उत्पन्न होती हैं।

स्त्री और पुरुष में चरित्र की दृष्टि से स्त्री का आसन ज्यादा ऊँचा है,
क्योंकि आज भी वह त्याग, मूक तपस्या, नम्रता, श्रद्धा और ज्ञान की मूर्ति है।

समाज को सुधारना है तो परिवारों को सुधारो। परिवारों का सुधार तथा
सुसंस्कृत परिवारों का निर्माण अच्छी माताएँ ही कर सकती हैं।

पुरुषार्थ प्रधान नर अपनी जगह ठीक है,
पर आत्मिक सम्पदा की दृष्टि से वह नारी से पीछे ही रहेगा।

जहाँ नर और नारी में परस्पर विश्वास है, प्रेम है, सौजन्य है,
सहानुभूति है, सौहार्द है, वहीं पर सच्चा स्वर्ग है।

नारी ब्रह्मविद्या, श्रद्धा, शक्ति, पवित्रता, कला और वह सब कुछ है
जो इस संसार में सर्वश्रेष्ठ के रूप में दृष्टिगोचर होता है।

नारी कल्पवृक्ष है, जो उसे लगनपूर्वक सींचता—पालता है,
वह इच्छित प्रतिफल वरदान रूप में प्राप्त करता है।

नारी देवी है। उसके अन्तःकरण में कोमलता, करुणा, ममता, सहृदयता एवं उदारता की पाँच देव–प्रवृत्तियाँ सहज स्वाभाविक रूप से अधिक है।

नारी धरा पर स्वर्गीय ज्योति की साकार प्रतिमा है।

हम परमेश्वर के पश्चात् सर्वाधिक ऋणी किसी के हैं, तो वह नारी के हैं;
क्योंकि प्रथम परमात्मा तो मात्र जीवन देता है,
किन्तु द्वितीय मातृशक्ति नारी हमें जीने के योग्य बनाती है।

पति को प्रगतिशील बनाने का श्रेय नारी को है।
वह सुख–दुःख, भूख–प्यास सभी सहकर उसका हाथ बँटाती है।

संसार का प्रत्येक प्राणी माँ के गर्भ से जन्म लेता है,
उसकी गोद में पलता और उसका ही स्वाभाव संस्कार लेकर बढ़ता है।

यह समझना भूल है कि नारी प्रगति के मार्ग का रोड़ा है।
सत्य यह है कि आत्मिक प्रगति उसके सहयोग से और भी सरल हो जाती है।

नारी अपनी कोमलता, सुशीलता, सम्वेदना, करुणा, स्नेह और ममता आदि हार्दिक विशेषताओं के कारण परिवार के निर्माण में महत्त्वपूर्ण स्थान रखती है।

परिवार का अर्थ मात्र विवाह का गठबन्धन नहीं,
अपितु एक मित्र की तरह साथ चलकर काम करने वाले समूह का नाम है।

मनुष्य मात्र का यह कर्त्तव्य है कि वह परम आध्यात्मिक शक्ति के रूप में
'माँ' को प्रतिष्ठा प्रदान करे, प्रत्येक नारी में भाववत्सला नारी का रूप देखें।

मनुष्य मात्र का यह कर्त्तव्य है कि नारी का शील सुरक्षित बनाये रखें,
उसे स्वावलम्बी बनाएँ ताकि वह अपनी विभूतियों का लाभ समाज को दे सके।

शील, लज्जा और शिष्टता ही नारी का भूषण है, जो अपनी पोषाक, वाणी, दृष्टि एवं चेष्टा से सदैव प्रकट होते रहना अभीष्ट है।

नारी कामधेनु है। जब उसे हम मातृबुद्धि से देखते हैं तो हमें देवत्व प्रदान करती है, पर जब उसे वासना की दृष्टि से देखा जाता है तो वह हमारे लिए अभिशाप बन जाती है।

प्रत्येक सद्गृहस्थ का कर्त्तव्य है कि माता, भगिनी, पत्नी और कन्या के जिस रूप में
नारी रहे, उसे स्वस्थ, प्रसन्न, शिक्षित, स्वावलम्बी एवं
सुसंस्कृत प्रतिभावान बनाने में कुछ भी कमी न रखें।

दैवी तत्त्व का एक मात्र प्रतीक मातृत्व है।
उसके प्रति उच्चकोटि की श्रद्धा रखे बिना देवत्व की पूजा एवं साधना नहीं हो सकती।

माता एक ऐसी भावनाशील कलाकार है जो कि एक हाड़–मांस के पुतले में
स्नेह दुलार और संस्कारों के ऐसे सुन्दर रंग भरकर उसे
चरित्रवान और महान विभूतियों की प्रतिमा बना देती है।

जिस प्रकार कुम्हार गिली मिट्टी को किसी भी प्रकार के वर्तन में बदल सकता है,
उसी प्रकार नारी अपने परिवार के सभी सदस्यों को इच्छा अनुरूप ढालने–बदलने में समर्थ है।

तीन प्रत्यक्ष देवताओं में माता, पिता और गुरु का स्थान हैं।
इन तीनों में माता प्रथम हैं।

नारी की महत्ता इसमें नहीं है कि कितने समृद्ध और कुशल पति की पत्नी है, बल्कि इस बात में है कि वह अपने साधारण से पति को भी अपने व्यवहार से कितना समृद्ध और सुखी बना देती है।

साधना या आत्मविकास के क्षेत्र में पुरुष–स्त्री का भेद नहीं।

नारी ने ही अपने वैभव से लक्ष्मी का रूप रचा, ज्ञानशक्ति से सरस्वती और शौर्यशक्ति से दुर्गा का रूप धारण किया। प्राणी मात्र के अन्दर नारी का यह त्रिशक्ति रूप ही परिलक्षित होता है।

नारी का सृजन जिन तत्त्वों से हुआ है, उनमें करुणा, स्नेह,
सौजन्य, आत्मीयता, आध्यात्मिकता का बाहुल्य है।

नारी स्वतन्त्रता का तात्पर्य है जो प्रकृति माँ ने उसको प्यार, ममता, शक्ति, नारित्व दिया है,
उसे सही अर्थ में समझकर अपनी कार्यशक्ति और स्वरूप को पहचानें।

युग परिवर्तन के लिए नेतृत्व का परिवर्तन भी आवश्यक है और नारी को सहृदयता और स्नेहसिक्तता के आधार पर नये सिरे से अवसर देना चाहिए।

आज संपूर्ण नारी जाति से प्रार्थना है कि वह घिनौने वातावरण को छोड़कर
समाज सुधार का, नैतिक उत्थान का सन्देश मानवता को दे।

पुरुषों से कन्धा मिलाकर घर और बाहर दोनों क्षेत्रों में नारी को कार्य करना होगा।
आज की शिक्षित नारी जिस पथ का निर्माण करेगी,
वह पथ बड़ा ही सुगम एवं आध्यात्मिक होगा।

नारी की सबल प्रेरणा पुरुष को नवशक्ति से भर देगी।

देवत्व के प्रतीकों में प्रथम स्थान नारी का और दूसरा नर का है।
जैसे लक्ष्मी–नारायण, उमा–महेश, शची–पुरन्दर, सीता–राम व राधे–श्याम।

माता का कलेवर और संस्कार बालक बनकर इस संसार में प्रवेश पाता और
प्रगति की दिशा में कदम बढ़ाता है।

व्यवहार में नारी को तुष्टि, तृप्ति और शान्ति के रूप में अनुभव किया जाता है।
आत्मिक क्षेत्र में वही भक्ति, शक्ति और समृद्धि है।

नारी को असमर्थ बनाकर रखने वालों को उसका भार भी वहन करना पड़ता है।

ऊषाकाल का उद्भव हो रहा है और अरुणोदय का परिचय मिल रहा है।
इस प्रभात पर्व में नारी का खोया वर्चस्व उसे नये सिरे से प्राप्त होकर रहेगा।

युग अवतरण के लिए सम्भावित नारी पुनरुत्थान भी
अपना उचित मूल्य माँगे तो उसमें आश्चर्य ही क्या है?

नारी युग की अधिष्ठात्री गरिमा सिकोड़े, समेटे और दबाये बैठी रहे,
यह विपन्नता क्यों, कैसे और कब तक बनी रह सकती है?

अन्धकार युग से उभरकर अनेक सद्प्रवृत्तियों की तरह नारी भी अब नये सिरे से अपने वर्चस्व का परिचय देने के लिए ऊपर आ रही है।

नारी अपना महत्त्व, मूल्य, अधिकार और भविष्य समझे। अनीतिमूलक बन्धनों को तोड़े और उस स्थिति में रहे जिसे कि स्वतन्त्र वातावरण में साँस लेने का अवसर मिले।

युग परिवर्तन की इस वेला में कन्या जन्म पर न किसी को विलाप करते देखा जाएगा और न पुत्रजन्म पर कहीं कोई बाजा बजाएगा। जो कुछ होगा वह दोनों के लिए समान होगा।

नारी उठेगी, अवांछनीयताओं के बन्धनों से मुक्त होगी और
इस सदी को नारी सदी के नाम से प्रख्यात बनायेगी।

प्राचीन संस्कारों के कारण अब भी एक साधारण भारतीय नारी में जो विशेषताएँ मिलती हैं,
संसार के किसी भी अन्य भाग में मिल सकना असम्भव है।

जननी को पुनर्जन्म मिले यह इस युग की सर्वोच्च क्रान्ति होगी। जननी का सही अर्थ केवल जन्म देने वाली नहीं बल्कि नारी में अन्तर्निहित मातृत्व की भावना है।

मातृत्व जीवन दृष्टि है जो स्वयं को, घर–परिवार और समाज को माँ के नजरिये से देखना सिखाती है।
अपने साथ व आस–पास के परिवार को एक विशिष्ट सम्वेदनशील अनुभूति के साथ जोड़ती है।

महिलाओं के विकास का आधार पुरुषों जैसी वेशभूषा या पुरुषों जैसे हावभाव का दिखना नहीं है, बल्कि उनके अन्दर की सम्वेदना, स्वावलम्बन व कलात्मक श्रमशीलता है।

नारी जब स्वयं के मातृभाव को मातृत्व के दृष्टिकोण को जगाकर अपने पैरों पर खड़ी हो जाती है, तो वह स्वयं ही क्रान्ति की सूत्रधार होती है।

भारत माता का जयघोष करते हुए स्वतन्त्रता संग्राम लड़ा गया है। बौद्धिक एवं
सामाजिक स्वतंत्रता प्राप्ति के लिए हम जन्मदात्री जननी की जय बोलते हुए आगे बढ़ेंगे।

जीव सृष्टि की संरचना जिस आदिशक्ति महामाया द्वारा संपन्न होती है,
उसे विधाता भी कहते हैं और माता भी।

मातृशक्ति ने यदि प्राणियों पर अनुकम्पा न बरसायी होती तो उनका अस्तित्व ही प्रकाश में न आता।

साधारण श्रेणी के व्यक्तियों को महापुरुषों की पंक्तियों में
बिठाने का श्रेय उनकी माताओं की ही है।

यदि प्रेम के साक्षात् दर्शन करने की अभिलाषा हो तो
माता के वात्सल्य भरे गद्‌गद नेत्रों को देखो।

बिना नारी को शिक्षित और स्वावलम्बी किए
धरा पर स्वर्गीय वातावरण की कल्पना असम्भव है।

आवश्यकता पड़ने पर नारी देश की रक्षा और समाज संचालन के कार्यों के नेतृत्व भी कर सकती है और मानव समाज का गौरव ऊँचा उठा सकती है।

नारी को बनाते समय उसमें उच्चस्तरीय भावना और आदर्शवादिता कूट–कूटकर भरी गयी है। इस तथ्य को भारत के ऋषिपुत्रों ने अवश्य समझा है।

तीनों लोकों में माता के समान कोई गुरु नहीं है।
संसार में आया हर प्राणी माता से अधिक और किसी का ऋणी नहीं है।

हमारा गौरव नारियों के शरीर को सजाने में नहीं
बल्कि उन्हें शक्ति, सरस्वती और साध्वी बनाने में है।

नारी के पास सबसे आदरणीय सम्पत्ति उसका सतीत्व है।
उसके प्रति आसक्ति नहीं, किन्तु उसकी दिव्यता के प्रति सम्मान का भाव रखें।

नारी पुरुष की पूरक सत्ता है। पुरुषों में मात्र दृष्टि होती है जबकि नारी में अन्तर्दृष्टि।
नारी के बिना पुरुष का व्यक्तित्व अपूर्ण है।

नारी का अपमान एक राष्ट्रीय कलंक है।
नारी को अविकसित रखकर कोई भी राष्ट्र उन्नति नहीं कर सकता।

ज्ञान के क्षेत्र में नारी अनादिकाल से नर के समान है।
नर के पास यदि क्षात्र तेज है तो नारी के पास ब्रह्मतेज।

नारी परिवार का हृदय और प्राण है।
परिवार को स्वर्ग बनाने की प्रकृति प्रदत्त क्षमता नारी में है।

एक स्त्री अपने जीवन में जितना त्याग करती है,
पुरुष उतना त्याग सौ जन्मों में भी नहीं कर सकता।

नारी बिना परिवार, हृदय बिना कलेवर जैसा है।
इसलिए परिवार में उसका महत्त्व और स्थान सर्वोपरि होना चाहिए।

न केवल व्यक्ति वरन् समाज और राष्ट्र का समग्र विकास
मातृशक्ति की गरिमा की प्रतिष्ठा द्वारा ही सम्भव है।

नारी अर्थात् सम्वेदना, सौजन्य तथा सौन्दर्य की पुंज।
इन्हीं विशेषताओं से भरापूरा इक्कीसवीं सदी का नारी युग होगा।

नारी जन्मदात्री है। समाज का प्रत्येक भावी सदस्य
उसकी गोद में पलकर संसार में खड़ा होता है।

नारी की अवमानना का अर्थ है अपनी उद्गम शक्ति की गरिमा को गिराना।
मातृसत्ता का अपमान भगवान भी नहीं सहते।

यदि हमें प्रतिष्ठा का उच्च सोपान चढ़ना है तो
नारी शक्ति को एक आध्यात्मिक स्वरूप में स्थापित करना ही होगा।

नारी विधेयात्मक शक्ति है। जो कार्य पुरुष ताण्डव द्वारा करता है,
नारी वही कार्य स्नेह, सरलता एवं सौम्यतापूर्वक कर लेती है।

एक आचार्य दस उपाध्याय के समान आदरणीय है; एक पिता सौ आचार्य के समान आदरणीय है;
किन्तु एक माता एक हजार पिता से भी विशेष सम्मान की अधिकारिणी होती है।

समाज की नवरचना का उद्देश्य तब तक पूर्ण नहीं हो सकता
जब तक नारी उन्नत और प्रगतिशील नहीं होगी।

नारी का सबसे बड़ा आभूषण 'प्रेम' है। वह उसकी प्राकृतिक शक्ति है,
जिससे वह राक्षस को देवता और मनुष्य को भगवान बना देती है।

नारी जिसे आत्मसमर्पण करती है, उसके दोषों को नीलकंठ की तरह जीवन भर बूंद–बूंद करके पी जाने में सतत प्रयत्नशील रहती है।

नारी की प्रतिष्ठा और गौरव को चिरस्थायी रखने के लिए सभी धर्मगन्थों में स्थान दिया गया है। मातृदेवो भवः के सम्बोधन से उपनिषद् में माता को अलौकिक सम्मान प्रदान किया गया है।

नारी को अर्द्धाङ्गिनी ही नहीं, सहधर्मिणी भी कहा गया है।
पुरुष का कोई भी धर्मकार्य पत्नी के बिना पूर्ण नहीं होता।

स्त्री का सहकार तथा महत्त्व मानव जीवन की उन्नति और विकास के लिए हमेशा से आवश्यक रहा है, आज भी है और भविष्य में भी रहेगा।

स्त्री कामधेनु है। जब उसे माता स्वरूप में देखा जाता है तो वह मानव समाज को देवत्व प्रदान करती है और अपने आशीर्वाद से सुख समृद्धि के द्वार खोल देती है।

नर—नारी का और नारी—नर का पूरक अंश है। जब यह दोनों अंश अलग—अलग होकर अपनी स्वतन्त्र सत्ता स्थापित करने की भूल करते हैं, तभी समाज में विकृतियाँ उत्पन्न होती हैं।

स्त्री और पुरुष में चरित्र की दृष्टि से स्त्री का आसन ज्यादा ऊँचा है,
क्योंकि आज भी वह त्याग, मूक तपस्या, नम्रता, श्रद्धा और ज्ञान की मूर्ति है।

समाज को सुधारना है तो परिवारों को सुधारो। परिवारों का सुधार तथा सुसंस्कृत परिवारों का निर्माण अच्छी माताएँ ही कर सकती हैं।

पुरुषार्थ प्रधान नर अपनी जगह ठीक है,
पर आत्मिक सम्पदा की दृष्टि से वह नारी से पीछे ही रहेगा।

जहाँ नर और नारी में परस्पर विश्वास है, प्रेम है, सौजन्य है,
सहानुभूति है, सौहार्द है, वहीं पर सच्चा स्वर्ग है।

नारी ब्रह्मविद्या, श्रद्धा, शक्ति, पवित्रता, कला और वह सब कुछ है
जो इस संसार में सर्वश्रेष्ठ के रूप में दृष्टिगोचर होता है।

नारी कल्पवृक्ष है, जो उसे लगनपूर्वक सींचता—पालता है,
वह इच्छित प्रतिफल वरदान रूप में प्राप्त करता है।

नारी देवी है। उसके अन्तःकरण में कोमलता, करुणा, ममता, सहृदयता एवं उदारता की पाँच देव–प्रवृत्तियाँ सहज स्वाभाविक रूप से अधिक है।

नारी धरा पर स्वर्गीय ज्योति की साकार प्रतिमा है।

हम परमेश्वर के पश्चात् सर्वाधिक ऋणी किसी के हैं, तो वह नारी के हैं;
क्योंकि प्रथम परमात्मा तो मात्र जीवन देता है,
किन्तु द्वितीय मातृशक्ति नारी हमें जीने के योग्य बनाती है।

पति को प्रगतिशील बनाने का श्रेय नारी को है।
वह सुख–दुःख, भूख–प्यास सभी सहकर उसका हाथ बँटाती है।

संसार का प्रत्येक प्राणी माँ के गर्भ से जन्म लेता है,
उसकी गोद में पलता और उसका ही स्वाभाव संस्कार लेकर बढ़ता है।

यह समझना भूल है कि नारी प्रगति के मार्ग का रोड़ा है।
सत्य यह है कि आत्मिक प्रगति उसके सहयोग से और भी सरल हो जाती है।

नारी अपनी कोमलता, सुशीलता, सम्वेदना, करुणा, स्नेह और ममता आदि हार्दिक विशेषताओं के कारण परिवार के निर्माण में महत्त्वपूर्ण स्थान रखती है।

परिवार का अर्थ मात्र विवाह का गठबन्धन नहीं,
अपितु एक मित्र की तरह साथ चलकर काम करने वाले समूह का नाम है।

मनुष्य मात्र का यह कर्त्तव्य है कि वह परम आध्यात्मिक शक्ति के रूप में
'माँ' को प्रतिष्ठा प्रदान करे, प्रत्येक नारी में भाववत्सला नारी का रूप देखें।

मनुष्य मात्र का यह कर्त्तव्य है कि नारी का शील सुरक्षित बनाये रखें,
उसे स्वावलम्बी बनाएँ ताकि वह अपनी विभूतियों का लाभ समाज को दे सके।

शील, लज्जा और शिष्टता ही नारी का भूषण है, जो अपनी पोषाक,
वाणी, दृष्टि एवं चेष्टा से सदैव प्रकट होते रहना अभीष्ट है।

नारी कामधेनु है। जब उसे हम मातृबुद्धि से देखते हैं तो हमें देवत्व प्रदान करती है, पर जब उसे वासना की दृष्टि से देखा जाता है तो वह हमारे लिए अभिशाप बन जाती है।

प्रत्येक सद्गृहस्थ का कर्त्तव्य है कि माता, भगिनी, पत्नी और कन्या के जिस रूप में
नारी रहे, उसे स्वस्थ, प्रसन्न, शिक्षित, स्वावलम्बी एवं
सुसंस्कृत प्रतिभावान बनाने में कुछ भी कमी न रखें।

दैवी तत्त्व का एक मात्र प्रतीक मातृत्व है।
उसके प्रति उच्चकोटि की श्रद्धा रखे बिना देवत्व की पूजा एवं साधना नहीं हो सकती।

माता एक ऐसी भावनाशील कलाकार है जो कि एक हाड़–मांस के पुतले में
स्नेह दुलार और संस्कारों के ऐसे सुन्दर रंग भरकर उसे
चरित्रवान और महान विभूतियों की प्रतिमा बना देती है।

जिस प्रकार कुम्हार गिली मिट्टी को किसी भी प्रकार के वर्तन में बदल सकता है, उसी प्रकार नारी अपने परिवार के सभी सदस्यों को इच्छा अनुरूप ढालने–बदलने में समर्थ है।

तीन प्रत्यक्ष देवताओं में माता, पिता और गुरु का स्थान हैं।
इन तीनों में माता प्रथम हैं।

नारी की महत्ता इसमें नहीं है कि कितने समृद्ध और कुशल पति की पत्नी है, बल्कि इस बात में है कि वह अपने साधारण से पति को भी अपने व्यवहार से कितना समृद्ध और सुखी बना देती है।

साधना या आत्मविकास के क्षेत्र में पुरुष–स्त्री का भेद नहीं।

नारी ने ही अपने वैभव से लक्ष्मी का रूप रचा, ज्ञानशक्ति से सरस्वती और शौर्यशक्ति से दुर्गा का रूप धारण किया। प्राणी मात्र के अन्दर नारी का यह त्रिशक्ति रूप ही परिलक्षित होता है।

नारी का सृजन जिन तत्त्वों से हुआ है, उनमें करुणा, स्नेह, सौजन्य, आत्मीयता, आध्यात्मिकता का बाहुल्य है।

नारी स्वतन्त्रता का तात्पर्य है जो प्रकृति माँ ने उसको प्यार, ममता, शक्ति, नारित्व दिया है,
उसे सही अर्थ में समझकर अपनी कार्यशक्ति और स्वरूप को पहचानें।

युग परिवर्तन के लिए नेतृत्व का परिवर्तन भी आवश्यक है और नारी को सहृदयता और स्नेहसिक्तता के आधार पर नये सिरे से अवसर देना चाहिए।

आज संपूर्ण नारी जाति से प्रार्थना है कि वह घिनौने वातावरण को छोड़कर
समाज सुधार का, नैतिक उत्थान का सन्देश मानवता को दे।

पुरुषों से कन्धा मिलाकर घर और बाहर दोनों क्षेत्रों में नारी को कार्य करना होगा।
आज की शिक्षित नारी जिस पथ का निर्माण करेगी,
वह पथ बड़ा ही सुगम एवं आध्यात्मिक होगा।

नारी की सबल प्रेरणा पुरुष को नवशक्ति से भर देगी।

देवत्व के प्रतीकों में प्रथम स्थान नारी का और दूसरा नर का है।
जैसे लक्ष्मी–नारायण, उमा–महेश, शची–पुरन्दर, सीता–राम व राधे–श्याम।

माता का कलेवर और संस्कार बालक बनकर इस संसार में प्रवेश पाता और
प्रगति की दिशा में कदम बढ़ाता है।

व्यवहार में नारी को तुष्टि, तृप्ति और शान्ति के रूप में अनुभव किया जाता है।
आत्मिक क्षेत्र में वही भक्ति, शक्ति और समृद्धि है।

नारी को असमर्थ बनाकर रखने वालों को उसका भार भी वहन करना पड़ता है।

ऊषाकाल का उद्भव हो रहा है और अरुणोदय का परिचय मिल रहा है।
इस प्रभात पर्व में नारी का खोया वर्चस्व उसे नये सिरे से प्राप्त होकर रहेगा।

युग अवतरण के लिए सम्भावित नारी पुनरुत्थान भी
अपना उचित मूल्य माँगे तो उसमें आश्चर्य ही क्या है?

नारी युग की अधिष्ठात्री गरिमा सिकोड़े, समेटे और दबाये बैठी रहे,
यह विपन्नता क्यों, कैसे और कब तक बनी रह सकती है?

अन्धकार युग से उभरकर अनेक सद्प्रवृत्तियों की तरह नारी भी अब नये सिरे से अपने वर्चस्व का परिचय देने के लिए ऊपर आ रही है।

नारी अपना महत्त्व, मूल्य, अधिकार और भविष्य समझे। अनीतिमूलक बन्धनों को तोड़े और उस स्थिति में रहे जिसे कि स्वतन्त्र वातावरण में साँस लेने का अवसर मिले।

युग परिवर्तन की इस वेला में कन्या जन्म पर न किसी को विलाप करते देखा जाएगा और न पुत्रजन्म पर कहीं कोई बाजा बजाएगा। जो कुछ होगा वह दोनों के लिए समान होगा।

नारी उठेगी, अवांछनीयताओं के बन्धनों से मुक्त होगी और
इस सदी को नारी सदी के नाम से प्रख्यात बनायेगी।

प्राचीन संस्कारों के कारण अब भी एक साधारण भारतीय नारी में जो विशेषताएँ मिलती हैं,
संसार के किसी भी अन्य भाग में मिल सकना असम्भव है।

जननी को पुनर्जन्म मिले यह इस युग की सर्वोच्च क्रान्ति होगी। जननी का सही अर्थ केवल जन्म देने वाली नहीं बल्कि नारी में अन्तर्निहित मातृत्व की भावना है।

मातृत्व जीवन दृष्टि है जो स्वयं को, घर–परिवार और समाज को माँ के नजरिये से देखना सिखाती है।
अपने साथ व आस–पास के परिवार को एक विशिष्ट सम्वेदनशील अनुभूति के साथ जोड़ती है।

महिलाओं के विकास का आधार पुरुषों जैसी वेशभूषा या पुरुषों जैसे हावभाव का दिखना नहीं है, बल्कि उनके अन्दर की सम्वेदना, स्वावलम्बन व कलात्मक श्रमशीलता है।

नारी जब स्वयं के मातृभाव को मातृत्व के दृष्टिकोण को जगाकर अपने पैरों पर खड़ी हो जाती है, तो वह स्वयं ही क्रान्ति की सूत्रधार होती है।

भारत माता का जयघोष करते हुए स्वतन्त्रता संग्राम लड़ा गया है। बौद्धिक एवं
सामाजिक स्वतंत्रता प्राप्ति के लिए हम जन्मदात्री जननी की जय बोलते हुए आगे बढ़ेंगे।

जीव सृष्टि की संरचना जिस आदिशक्ति महामाया द्वारा संपन्न होती है,
उसे विधाता भी कहते हैं और माता भी।

मातृशक्ति ने यदि प्राणियों पर अनुकम्पा न बरसायी होती तो उनका अस्तित्व ही प्रकाश में न आता।

साधारण श्रेणी के व्यक्तियों को महापुरुषों की पंक्तियों में
बिठाने का श्रेय उनकी माताओं की ही है।